मोह मुक्त हो बुद्धि

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मोह का अर्थ है अविद्या, अज्ञान, क्रोध, मान, माया, लोभ मोह का परिवार बड़ा लम्बा है। जितनी बुराईयां हैं वह सब मोह रूपी वटवृक्ष की शाखाएं हैं। भारतीय संस्कृति में अनेकता में एकता को महत्व दिया गया है। सभी संस्कृतियों में मोह को अज्ञान कहा गया है। दुःख का कारण मोह है। मोह के कारण व्यक्ति गलत कार्य करता है। निर्मोही अवस्था अच्छाई की अवस्था है। इसलिए बुद्धि को मोह से मुक्त होना चाहिए। शरीर में पांच कर्मेन्द्रियां, पांच ज्ञानेन्द्रियां और मन सदैव सक्रिय रहता है। इन्द्रियां बाह्य विषयों को ग्रहण कर मन को प्रदान करती हैं। बुद्धि का कार्य है निर्णय करना। कुबुद्धि और सुबुद्धि अपना कार्य करती रहती हैं। सुबुद्धि से अच्छा कार्य और कुबुद्धि से बुरा कार्य होता है। कुबुद्धि बुराई है। राग–द्वेष से किया गया कार्य स्वार्थ से प्रेरित होता है। प्रज्ञा निर्मोही होती हैं। प्रज्ञा आत्मा का प्रतिनिधित्व करती है। प्रज्ञा जागृत रहती है तो बुद्धि मोह युक्त नहीं होती। प्रज्ञा तीसरा नेत्र है। तीसरे नेत्र के उद्घाटित हो जाने पर दृष्टि में समभाव आ जाता है। गीता में स्थितप्रज्ञ का विवेचन किया गया है। स्थितप्रज्ञ की अवस्था समता की अवस्था है। इस अवस्था में मन से राग–द्वेष समाप्त हो जाता है। मानव जैसा बीज बोता है वैसे ही उसको फल प्राप्त होता है। बीज बोने में हम स्वतन्त्र हैं किन्तु फल में परतन्त्र है। जैसा बीज वैसा फल। कारण के बिना कार्य नहीं होता। यदि कारण अच्छा है तो कार्य भी अच्छा होगा। जैसा पुरुषार्थ किया जायेगा परिणाम भी वैसा ही होगा। मोहग्रस्त बुद्धि अच्छे और बुरे में निर्णय नहीं कर पाती। इसलिए बुद्धि की निर्मलता बहुत आवश्यक है।

बुद्धि मोहग्रस्त न होकर मोहमुक्त होनी चाहिए। हमारे विचारधारा निष्पक्ष होनी चाहिए। महाभारत का युद्ध मोहग्रस्त का परिणाम था। यदि धृतराष्ट्र पुत्र मोह से ग्रस्त न होते तो महाभारत का युद्ध न होता। जहां मोह वहां विनाश अवश्यंभावी है। व्यक्ति को निर्मोही जीवन जीना चाहिए। निर्मोही अवस्था में ही निष्पक्षता हो सकती है। न्यायाधीश किसी पक्ष को छोटा

या बड़ा नहीं समझता। वह तर्क का परिक्षण करता है और न्याय देता है। यदि वह मोहग्रस्त हो जाये तो न्याय ही गलत हो जायेगा। सभी के साथ समता का व्यवहार होना चाहिए। एक पिता के पुत्रों में पिता की दृष्टि मोहग्रस्त नहीं होनी चाहिए, नहीं तो पुत्रों में संघर्ष होता रहेगा। भारतीय संस्कृति में चार पुरुषार्थ माने गये है– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। मोक्ष मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। मोक्ष की प्राप्ति कैसे हो यह एक बड़ा प्रश्न है। योगी हो या भोगी सभी यह चाहते है कि उनके जीवन का अन्त अच्छा हो। किन्तु अपने–अपने कर्मों के अनुसार सबको फल प्राप्त होता है और कर्मों के अनुसार ही चौरासी लाख जीव योनियों में भटकना पड़ता है। सुख–दुःख जीवन में आने वाले दो पड़ाव हैं। अपने प्रारब्ध के अनुसार या कृत कर्मों के अनुसार सबको सुख–दुःख भोगना पड़ता है। कर्मबन्ध के पांच कारण माने गये हैं– मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग। इन्हीं पांचों को बंध का कारण माना गया है। कषाय और योग को बंध का कारण कहा गया है। मिथ्यादर्शन विपरीत श्रद्धान है। मिथ्यादर्शन के कारण तत्त्वों का यथार्थ श्रद्धान नही होता। जीवादि पदार्थों का श्रद्धान न करना मिथ्या दर्शन है। विरति का अभाव अविरति है। हिंसा आदि पांच पापों को नहीं छोड़ना या अहिंसादि पांच व्रतों का पालन न करना अविरति है। प्रमाद का अर्थ है उत्कृष्टरूप से आलस्य का होना। क्रोधादि के कारण जीव की सत्कर्मों में रुचि नहीं होती। इसीलिए सकषाय अवस्था को प्रमाद कहा गया है।

क्रोध, मान, माया, लोभ आदि आत्मा को कुगति में ले जाने के कारण आत्मा के स्वरूप को कसते हैं, इसलिए इन्हें कषाय कहा जाता है। चारित्र परिणाम के कसने के कारण भी ये कषाय कहलाते हैं। मन, वचन और काय के द्वारा होने वाले आत्मप्रदेशों के परिस्पन्दन को योग कहते हैं। इन्हीं के कारण कर्म आत्मा से बंधते हैं। प्रायः सभी दार्शनिक मिथ्याज्ञान या अविद्या को बन्ध का कारण स्वीकार करते हैं। भारतीय दर्शन में अनेक दार्शनिक सम्प्रदाय है, जिन्होंने बन्धन का विवेचन किया है। बन्ध होता है, इसे सभी भारतीय दार्शनिक स्वीकार करते हैं। सांख्यदार्शनिक स्वीकार करते हैं कि बन्ध पुरुष या आत्मा का नहीं, बल्कि प्रकृति का होता है। पुरुष न बन्धन ग्रस्त होता है और न मुक्त ही होता है। जन्ममरणरूप संसार अथवा बन्धन और मोक्ष ये सब धर्म वास्तविक में भोग्य–भोग, भोगसाधन, भोगायतनभूत अनेक पदार्थों की

आश्रयस्वरूपा प्रकृति के ही हैं। यह बन्धन क्यों होता है? इस सम्बन्ध में सांख्यकारिका में कहा गया है कि बन्धन का कारण अज्ञान है। योगदर्शन में भी अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश ये पांच क्लेश कहे गये हैं। ये पांचों ही जीवमात्र को संसार चक्र में घुमानेवाले महादुःखदायक हैं। यही बन्धन के कारण हैं। न्यायसूत्र में भी मिथ्याज्ञान को सभी दुःखों का कारण माना गया है। मिथ्याज्ञान ही मोह है। शरीर, इन्द्रिय, मन, वेदना और बुद्धि के अनात्म होने पर भी इनमें 'मैं ही हूं' और ये मेरे हैं ऐसा जो ज्ञान होता है यही मोह है, यही कर्म बन्धन का कारण है। बौद्धदर्शन में भी अविद्या को बन्धन का कारण माना गया है। चार आर्यसत्यों का अज्ञान ही अविद्या है। अनित्य दुःख और अनात्मभूत जगत में आत्मा को खोजना या सुख को खोजना अविद्या है। अविद्या के कारण ही जन्ममरण का चक्र चलता है। मोहग्रस्त जीव को सत्य का स्वरूप स्पष्ट दिखलायी नहीं पड़ता। मोहग्रस्तता के कारण बुद्धि मलिन हो जाती है।